ऊंट:

रेगिस्तान की जीवनरेखा

संकलन और पाठ
संध्या झा, सूरज सिंह

संकल्पना
लोक प्रिया

ग्राफिक डिजाइन
लोक प्रिया

डेसर्ट रिसोर्स सेंटर

THE CAMEL PARTNERSHIP

अधिक जानकारी के लिए
tcp.urmul.org

हिंदी संस्करण | 2020

इस पुस्तिका का मुद्रण सेंटर फॉर पास्टोरालिज्म (सहजीवन) एवं उरमूल ट्रस्ट के सामाजिक सरोकार, विश्वास और आर्थिक मदद से संभव हो पाया

URMUL TRUST

ऊंट:
रेगिस्तान की जीवनरेखा

Revitalising

Centre for Pastoralism

Lokhit Pashu-Palak Sansthan

विषय वस्तु

इस पुस्तिका का उद्देश्य 6
रेगिस्तान का परिचय 8
ऊंटों का इतिहास 9
ऊंट की बनावट की विशेषताएँ 10
ऊंट के प्रकार 14
ऊंट का चारा 18
पोषक तत्वों से भरपूर है ऊंटनी का दूध 26
ऊंट को होने वाली प्रमुख बीमारियाँ 30
ऊंट एक बहु उपयोगी राजकीय पशु 35
ऊंट पालक समुदाय 38
ऊंटों की संस्कृति 42
वर्तमान में ऊंटपालक चुनौतियां और समाधान 47
डूबता रेगिस्तान का जहाज 48
समाधान 49
परियोजना में शामिल संस्थाएं और उनका परिचय 50
परियोजना का स्थान 52
पाठक वर्ग 53
सामग्री स्रोत 53

'ऊंट के मुंह में जीरा' की कहावत हम सभी ने सुनी और पढ़ी है। पहाड़ जैसी जरूरत, और राई बराबर उपलब्धता होने पर सहज ही यह कहावत किसी के भी मुंह से निकल आती है। लेकिन इस कहावत में बेचारे जिस ऊंट का इस्तेमाल किया गया है, वह वाकई में जीरे जितने संसाधन से ही अपनी जिंदगी जी लेता है। रेगिस्तान के इस पशु के विशाल शरीर को जिंदा रखने के लिए रेत के कठिन वातावरण में पर्याप्त संसाधन नहीं होते हैं। लेकिन इसने सीमित संसाधनों को ही अपने लिए अवसर बना लिया है, खुद को उसके अनुकूल इस कदर ढाल लिया है कि रेगिस्तान के अलावा उसे दूसरी जगह अच्छी नहीं लगती है।

ऊंट देश–दुनिया के किसी भी हिस्से में हो, उसे मुक्त कर दिया जाए तो वह सीधे रेगिस्तान की तरफ भागता है। इस बारे में हमारे समाज में, खासतौर से देश के पूर्वी और उत्तरी हिस्से में एक और कहावत चलती है –ऊंट छूटता है तो पश्चिम की ओर भागता है। पश्चिम यानी राजस्थान, रेगिस्तान।

अब इस ऊंट को कमाल का पशु नहीं कहेंगे तो क्या कहेंगे। एक ऐसा पशु जिसे हरियाली नहीं, सूखा रेगिस्तान रास आता है, जो विषम परिस्थिति में जीने का हौंसला रखता है। रेगिस्तान की कड़ाके की ठंड हो या फिर भीषण गर्मी, ऊंट अपना जीवन आसानी से बसर कर लेता है। इसने अपने आपको प्रकृति के साथ इस कदर ढाल लिया है कि रेतीली आंधी और सूरज की तेज किरणें भी इस पर बेअसर होती हैं। अजीब–सा दिखने वाला यह पालतू पशु बिना पानी के कई दिनों तक जीवित रह सकता है। यह रेत के धोरों में तेज धावक की तरह बिना रुके थके लंबी दौड़ लगा लेता है।

ऊंट को संस्कृत में उष्ट्र कहते हैं, और यह उश्ट्र शब्द संस्कृत के महाकवि कालिदास के जीवन से भी जुड़ा हुआ है। किवदंती पर भरोसा करें तो एक मूर्ख कालिदास को महाकवि कालिदास बनने के पीछे उश्ट्र शब्द की निर्णायक भूमिका रही है। इसके पीछे एक प्रचलित कहानी है, जिसे समाज में कई लोग जानते हैं। हालांकि प्रसंगांतर के कारण उस कहानी का जिक्र यहां नहीं किया जा रहा है। लेकिन इससे एक तथ्य स्पश्ट होता है कि कालिदास के समय (चौथी और पांचवी सदी) में ऊंट यहां अच्छी संख्या में मौजूद थे।

रेगिस्तान का परिचय

रेगिस्तान का अपना आकर्षण है। जिस तरह समुद्र के किनारे खड़ा होने पर प्रकृति की विराटता का अहसास होता है, उसी प्रकार रेगिस्तान के बीच से गुजरने पर भी। माना यह जाता है कि जहां आज रेगिस्तान है, वहां कभी न कभी समुद्र रहा है, जो अब या तो सूख गया है या फिर पीछे हट गया है। यही कारण है कि रेगिस्तान के गर्भ में तेल, गैस, कोयला या फिर अन्य प्राकृतिक खनिजों का अथाह भंडार छिपा हुआ है। रेगिस्तान के भूगोल का अध्यन करने से इस बात की जानकारी भी मिलती है। इसीलिए ऊंट को रेतीले रेगिस्तान का जहाज भी कहा जाता है।

इस पुस्तिका का उद्देश्य

ऊंट एवं ऊंटपालक को केंद्र में रखकर लिखी गई इस पुस्तिका का मूल उद्देश्य ऊंट एवं ऊंटपालन से जुड़ी अधिकतम जानकारी को संकलित कर आम जनमानस के लिए उपलब्ध कराना है। यह पुस्तिका द कैमल पार्टनरशिप के अंतर्गत तैयार की गई है, जो ऊंटपालन को सामाजिक उद्यम से जोड़ते हुए ऊंटनी के दूध के माध्यम से ऊंटपालकों के रोजगार को बढ़ावा दे सकती है।

ऊंटों का इतिहास

पृथ्वी पर विचरण करने वाले सबसे लंबे–चौड़े पशुओं में शामिल ऊंट के बारे में आज यदि यह कहा जाए कि कभी यह खरगोश जितना छोटा हुआ करता था तो किसी को सहसा विश्वास नहीं होगा, लेकिन यह सच है कि पोटीपोलस नामक ऊंट खरगोश जितना ही ऊंचा था।

माना जाता है कि लगभग 50 हजार साल पहले विकास क्रम में ऊंट की उत्पत्ति हुई और ऊंट के कैमिलीड वर्ग का उद्‌भव सबसे पहले उत्तरी अमेरिका में हुआ था। जंगली ऊंट अनुमानतः आटीया और डकटेला कोटि तथा टाइलोपोडा उपकोटि में आने वाले उष्ट्रवंश से ताल्लुक रखता है। प्राचीन काल में एक और दो कूबड़ वाले ऊंट पाए जाते थे। भारत में एक कूबड़ वाला ऊंट पाया जाता है।

भारत में ऊंटों के बारे में इतिहासकार डॉविल्सन ने लिखा है कि ईसा से तीन हजार साल पहले आर्यों के यहां आगमन के दौरान एक कूबड़ वाले ऊंट के बारे में जानकारी नहीं थी, लेकिन लगभग 2300 साल पहले सिकंदर के आक्रमण के समय एक कूबड़ वाले ऊंट भारत में लाए गए थे। ईसा से 3000 से 1800 साल पहले हड़प्पा संस्कृति काल में भी भारत में ऊंटों का उल्लेख मिलता है। लेकिन यह भी माना जाता है कि वर्तमान में सिंध और राजस्थान के रूप में पहचाने जाने वाले क्षेत्र में आदिकाल से एक कूबड़ वाले ऊंट उपलब्ध थे।

ऊंटों की शारीरिक बनावट का महत्व

ऊंट को रेगिस्तान का जहाज कहा जाता है। यानी रेगिस्तान में यातायात का एक मात्र साधन ऊंट ही रहा है। ऊंट की शारीरिक बनावट का उसकी इस भूमिका में विशेष योगदान है। ऊंट की औसतन आयु 40 से 50 वर्ष तक की होती है। ऊंट अपने जीवनकाल में रेगिस्तान की शुष्क एवं विपरीत परिस्थिति में सुगमतापूर्वक जीवन निर्वाह करता है। रेगिस्तान में तापमान बहुत अधिक होता है और मई–जून के महीनों में तापमान 50 डिग्री सेल्सियस तक चला जाता है। रेगिस्तान के कठिन वातावरण में चारे और पानी की व्यवस्था हर जगह नहीं होती, और ऐसी कठिन परिस्थिति में ऊंट जिंदा रहता है।

यहां चारे की उपल्बधता कीकड़, बेर, खेजड़ी, जाल, केर, फोग आदि झाड़ियों के रूप में होती है, जिनमें से अधिकतर कांटेदार होती हैं। गर्मियों में धूल भरी आंधियां शुरू हो जाती हैं, जिस कारण बड़े–बड़े रेत के धोरों की आकृति बदल जाती है। ऐसे में यहां दूसरे पशु जीवनयापन नहीं कर पाते हैं। ऊंट यहां इसलिए जिंदा रह पाता है, क्योंकि उसकी शारीरिक बनावट और बुनावट यहां की प्रकृति के अनुकूल है। ऊंट की विशेश शारीरिक बनावट ही उसे यहां की कठोर परिस्थिति में जीने के काबिल बनाती है। ऐसे में ऊंट की शारीरिक बनावट और उसके प्रत्येक अंग के महत्व को जानना जरूरी है।

ऊंट का कूबड़

ऊंट एक ऐसा जानवर है, जो रेगिस्तान में यातायात व आजीविका का एक प्रमुख साधन है, और इस लिहाज से इसके कूबड़ का बहुत महत्व है। ऊंट के पीठ के ऊपर एक पिरामिड के आकार की आकृति होती है, जिसे कूबड़ कहते हैं। पूरे विश्व में कूबड़ के आधार पर दो प्रकार के ऊंट पाए जाते हैं –एक कूबड़ वाले और दो कूबड़ वाले। एक कूबड़ वाले ऊंट पश्चिम एशिया, सहारा रेगिस्तान, थार रेगिस्तान आदि में पाए जाते हैं, जबकि दो कूबड़ वाले गोबी रेगिस्तान (मंगोलिया), लद्दाख (भारत), मध्य एशिया आदि क्षेत्रों में पाए जाते हैं।

ऊंट रेगिस्तान के इलाकों में कई–कई दिनों तक बिना पानी के रह सकता है। लोगों में ऐसा भ्रम है कि ऊंट के कूबड़ में पानी जमा होता है, परंतु यह सत्य नहीं है। ऊंट के कूबड़ में पानी की मात्रा न के बराबर होती है। वास्तव में ऊंट अपने कूबड़ में फैट (वसा) जमा करके रखता है, जो जरूरत पड़ने पर उसके लिए भोजन और पानी की कमी पूरी करता है और उसे ऊर्जा प्रदान करता है। खास बात यह कि ऊंट को यह कूबड़ जन्म से नहीं होता, बल्कि ऊंट के बच्चे जैसे–जैसे बड़े होते हैं, उन्हें कूबड़ विकसित होता जाता है। ऊंट का कूबड़ शरीर से लगभग 30 इंच तक बढ़ता है, और कूबड़ सहित ऊंट की ऊंचाई लगभग सात फुट होती है।

ऊंट के पैर

ऊंट रेगिस्तान में आसानी से चल सकता है और दौड़ सकता है, इसीलिए इसे रेगिस्तान का जहाज कहा जाता है। ऊंट के पैर पतले, लंबे और फुर्तीले होते हैं। रेगिस्तान में ऊंट 65 किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार से दौड़ सकता है। ऊंट के पैर नीचे से चौड़े होते हैं और उसके वजन को रेत पर फैला देते हैं। इस कारण पैर रेत में धंसते नहीं हैं और वह आसानी से चल पाता है।

ऊंट की त्वचा

ऊंट के शरीर पर बालों की एक मोटी परत होती है। ये बाल उसे तेज धूप से बचाते हैं। ऊंट को पसीना नहीं आता, क्योंकि उसकी मोटी चमड़ी सूर्य की किरणों को परावर्तित कर देती है। ऊंट की चमड़ी की इस विशेषता के कारण उच्च

तापमान में भी उसके शरीर के अंदर पानी की कमी नहीं होती है। एक स्वस्थ ऊंट के शरीर का तापमान दिनभर में 34 डिग्री सेल्सियस से 41.7 डिग्री सेल्सियस के बीच ऊपर–नीचे होता रहता है। इस तापमान को नियंत्रित करने में चमड़ी और त्वचा के बालों की अहम भूमिका होती है। ऊंट के शरीर का रंग भी रेगिस्तान के मौसम में उसके जीवन को आसान बनाता है। इसके पेट और घुटनों की त्वचा रबर जैसी होती है। ऊंट जब बैठता है, तब यह त्वचा रेत के संपर्क में आने पर भी उसका बचाव करती है। यह त्वचा ऊंट में पांच वर्ष की उम्र बाद विकसित होती है।

ऊंट का मुंह

ऊंट कांटेदार टहनियों को भी आसानी से खा सकते हैं, जबकि दूसरे पशु कांटेदार तने या टहनियां नहीं खा पाते। ऊंट के तकरीबन 34 दांत होते हैं, जो काफी मजबूत और नुकीले होते हैं। ऊंट के होंठ की त्वचा मोटी और लचीली होती है, जिस कारण यह कांटेदार नरम टहनियों को भी आसानी से खा लेता है। ऊंट की जीभ भी मोटी और खुरदुरी होती है, जिससे कांटे जीभ में नहीं चुभ पाते हैं। ऊंट अपने दांतों का इस्तेमाल अपनी रक्षा के लिए भी करता है।

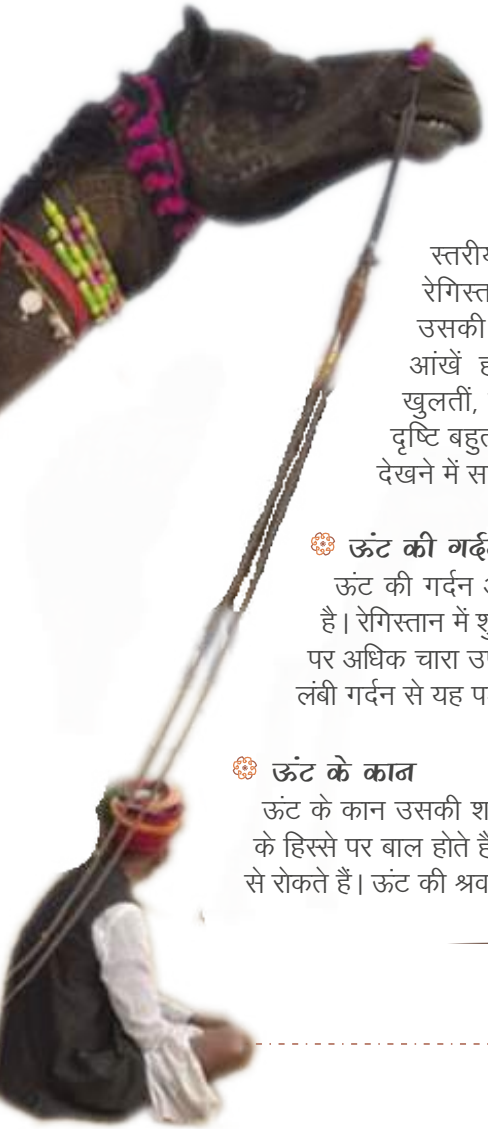

ऊंट की आंखें

ऊंट की आंखों की भौंहे अपेक्षाकृत बड़ी और पलकें दो स्तरीय होती हैं। भौंहे दो स्तरीय पलकों से जुड़ी होती हैं, जिसके कारण रेगिस्तान में चलने वाली तेज हवाओं से धूल–मिट्टी उसकी आंखों तक नहीं पहुंच पाती है। ऊंट की आंखें हमारी तरह ऊपर से नीचे की ओर नहीं खुलतीं, बल्कि दोनों किनारों से खुलती हैं। ऊंट की दृष्टि बहुत तेज होती है, जोकि धूल भरी आंधियों में भी देखने में सहायक होती है।

ऊंट की गर्दन

ऊंट की गर्दन अन्य जानवरों की गर्दन की अपेक्षा लंबी होती है। रेगिस्तान में शुष्क जलवायु और रेत होने की वजह से जमीन पर अधिक चारा उपलब्ध नहीं हो पाता, और ऐसी स्थिति में अपनी लंबी गर्दन से यह पशु ऊंचे वृक्षों की पत्तियों को भी खा पाता है।

ऊंट के कान

ऊंट के कान उसकी शरीर की अपेक्षा छोटे होते हैं और कान के आगे के हिस्से पर बाल होते हैं। ये बाल कान के अंदर धूल के कण को जाने से रोकते हैं। ऊंट की श्रवण शक्ति अधिक होती है।

ऊंटो के प्रकार

राजस्थान में मुख्यरूप से चार प्रकार के ऊंट पाए जाते हैं –बीकानेरी ऊंट, जैसलमेरी ऊंट, कच्छी नस्ल, मेवाड़ी ऊंट।

बीकानेरी ऊंट

बीकानेरी नस्ल भारत की एक प्रमुख उष्ट्र नस्ल है। इस नस्ल का नाम 'बीकानेर' शहर से लिया गया है, जिसकी स्थापना राव बीका ने 15वीं शताब्दी में की थी। इस नस्ल के ऊंट अपनी श्रेष्ठ भारवहन क्षमता के लिए जाने जाते हैं।

आवास एवं वितरण

बीकानेरी ऊंट बीकानेर जिले में और उसके आस–पास के क्षेत्रों में पाए जाते हैं। यह नस्ल राजस्थान के श्री गंगानगर, चुरू, झुंझुनू, सीकर एवं नागौर तथा सीमा से लगे हरियाणा एवं पंजाब राज्यों में भी पाई जाती है। इसका प्रजनन क्षेत्र पूर्व में 71°53′ देशांतर से 78°15′ तक तथा उत्तर में यह 24°37′ से 30°30′ अंक्षाश तक फैला हुआ है। इस नस्ल के गृह क्षेत्र का वातावरण शुष्क एवं रेतीला तथा अधिक गर्म एवं ठंडा है।

विशेषताएं

बीकानेरी ऊंट आकर्षक, मजबूत एवं उत्तम बनावट के होते हैं। ये काफी सक्रिय होते हैं। ये सामान्यतया गहरे भूरे रंग के या काले रंग के होते हैं। यद्यपि कुछ

जानवरों का रंग हल्का लाल भी होता है। इनका शरीर सुडौल एवं सिर थोड़ा गुंबद के आकार का होता है। इनके सिर पर आगे की ओर गहरा गड्ढा होना इनकी एक विशिष्ट पहचान है। इनकी नाक लंबी और सिर के दो–तिहाई भाग तक फैली होती है। इस नस्ल के कुछ ऊंटों की भौंहों, पलकों एवं कानों पर घने काले बाल पाए जाते हैं, जिससे इन्हें 'झींपरा' कहा जाता है। इनकी छाती में स्थित तलुआ अच्छी तरह विकसित एवं कोहनी के कोण पर स्थित होता है। इनके कंधे मजबूत, चौड़े और अच्छी तरह छाती से लगे होते हैं। इस नस्ल के ऊंट की गर्दन मोटी और पर्याप्त ऊंचाई में होती है। मादा में अयन अच्छी तरह विकसित होता है।

जैसलमेरी ऊंट

आवास एवं वितरण

जैसलमेरी नस्ल के ऊंट के प्रजनन क्षेत्र में जैसलमेर, बाड़मेर एवं जोधपुर जिले के हिस्से शामिल हैं। प्रजनन क्षेत्र पूर्व की ओर 69° 30′ से 73° 04′ देशांतर तक एवं उत्तर की ओर 24° 37′ से 28° 15′ अक्षांश में बहुत कम वनस्पति वाला है। रेतीले धोरे इस क्षेत्र की विशिष्ट पहचान हैं।

विशेषताएं

जैसलमेरी ऊंट स्वभाव से फुर्तीले एवं पूर्ण ऊंचाई व पतली टांगों वाले होते हैं। इनका सिर और मुंह छोटा होता है तथा इनकी थूथन संकरी होती है। इन ऊंटों की गर्दन पतली और लंबी तथा आंखें चमकदार होती हैं। सिर गुंबद के आकार का नहीं होता है तथा अग्र सिर पर किसी प्रकार का गड्ढा नहीं होता है। इनकी भौंहों, पलकों एवं कानों पर घने काले बाल नहीं पाए जाते हैं। ये ऊंट सामान्यतया

हल्के भूरे रंग के होते हैं। जैसलमेरी ऊंटों के शरीर पर पतली त्वचा एवं छोटे बाल होते हैं। अयन सामान्यतया आकार में गोल होते हैं। यह ऊंट की एक मध्यम आकार की नस्ल है।

मेवाड़ी ऊंट

ऊंट के इस नस्ल ने अपना नाम मेवाड़ क्षेत्र से प्राप्त किया है, जहां ये बहुतायत पाए जाते हैं। मेवाड़ी नस्ल अपनी दुग्ध उत्पादन क्षमता के लिए प्रसिद्ध है।

आवास एवं वितरण

मेवाड़ी नस्ल के ऊंट का प्रमुख प्रजनन क्षेत्र राजस्थान के उदयपुर, चित्तौड़गढ़, राजसमंद जिले तथा मध्यप्रदेश के नीमच एवं मंदसौर मंसूर जिले हैं। इस नस्ल के ऊंट राजस्थान के भीलवाड़ा, बांसवाड़ा, डूंगरपुर जिलों तथा राजस्थान के हाड़ौती में भी देखे जा सकते हैं। इनका प्रजनन क्षेत्र पूर्व की ओर 73° 02′ से 77° 20′ देशांतर एवं उत्तर में 22° 55′ से 25° 46′ अंक्षाश तक अच्छी वनस्पति एवं वर्षायुक्त है। इस क्षेत्र की समुद्र तल से औसत ऊंचाई 575 मीटर है। यह क्षेत्र मेवाड़ की अरावली की पहाड़ियों से अटा हुआ है।

विशेषताएं

मेवाड़ी ऊंट बीकानेरी ऊंटों से स्थूल एवं कुछ छोटे होते हैं। इनके पुट्ठे मजबूत, टांगें भारी, पांवों के तलवे कठोर एवं मोटे होते हैं। पहाड़ों पर यात्रा एवं भार ले जाने के लिए ये अनुकूलित हैं। इनके शरीर के बाल रूक्ष होते हैं, जो इन्हें जंगली मधुमक्खियों एवं कीड़ों के काटने से बचाते हैं। ये ऊंट हल्के भूरे रंग के या सफेद होते हैं। कुछ ऊंट बिल्कुल सफेद रंग के होते हैं। सामान्यतया इस प्रकार की रंग–विविधता ऊंटों

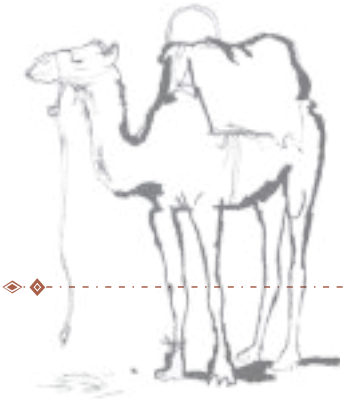

में कम देखाई देती है। इनका सिर भारी होता है और गर्दन मोटी होती है। बीकानेरी ऊंट से अलग मेवाड़ी ऊंट के अग्र सिर पर कोई गड्ढा नहीं पाया जाता है, परंतु इनकी थूथन ढीली होती है। इनके कान मोटे और आकार में छोटे तथा पृथक रूप से होते हैं। इनकी पूंछ लंबी और मोटी होती है। मादा में दुग्ध शिरा पूर्ण विकसित एवं अयन भारी होते हैं।

कच्छी नस्ल

आवास एवं वितरण

ऊंट की कच्छी नस्ल गुजरात राज्य के कच्छ के रण में बसती है। प्रमुख प्रजनन क्षेत्र गुजरात के कच्छ एवं बनासकांठा जिले हैं तथा यह पूर्व में 68° 20′ से 74° देशांतर एवं उत्तर में 22° 51′ से 24° 37′ अक्षांश तक विस्तारित है। यहां की धरती दलदली एवं नमकीन झाड़ियों से परिपूर्ण है।

विशेषताएं

कच्छी नस्ल के ऊंट सामान्यतया मटमैले रंग के होते हैं तथा इनकी भौंहों एवं कानों पर बाल नहीं होते हैं। शरीर के बाल रूक्ष होते हैं। मध्यम आकार का सिर तथा अग्र सिर पर गड्ढा नहीं होता है। इनका शरीर मध्यम आकार का होता है। इस नस्ल के ऊंट भारी लेकिन प्रदर्शन में ढीले होते हैं। ये बलवान एवं कुछ छोटे होते हैं। इनके पुट्ठे मजबूत, टांगें भारी, पावों के तलवे कठोर एवं मोटे होते हैं। ये कच्छ के नम वातावरण एवं दलदली भूमि को अच्छी तरह से अनुकूलित किए हुए हैं। कुछ जानवरों में दांत दूरी पर स्थित होने के कारण नीचे के होंठ लटके हुए होते हैं। अयन अच्छी तरह विकसित एवं ज्यादातर आकार में गोल होते है

ऊंटो का चारा

प्राकृतिक वातावरण में ऊंट ऐसे पौधों का सेवन करता है, जिससे कई सारे पशु दूर ही रहते हैं। यानी ऊंट कंटीले पौधों का भी सेवन चारे के रूप में कर लेता है। ऊंट के शरीर की मुख्य जरूरत नमक है। रेगिस्तानी पौधों में नमक की मात्रा पर्याप्त रूप में होती है, और ऊंट को अलग से नमक देने की जरूरत नहीं होती है। कुछ रेगिस्तानी पौधों की जड़ों में उच्चस्तर की नमी होती है। ये पौधे विशेष रूप से सूखे की अवधि के दौरान ऊंटों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं।

कुल मिलाकर, रेगिस्तान में घास, झाड़ियों और पेड़ों की 50 से अधिक ऐसी प्रजातियां उगती हैं, जो ज्यादातर जानवरों के लिए खाद्य नहीं हैं। लेकिन ऊंट इन्हें बड़े चाव से खाते हैं। ऊंट रेगिस्तान में जिन पौधों का चारे के रूप में सेवन करते हैं, वे निम्न प्रकार हैं।

खेजड़ी

खेजड़ी की पत्तियां प्रोटीन और ऊर्जा दोनों का बहुत अच्छा स्रोत हैं। इसलिए खेजड़ी की पत्तियां राजस्थान में पशुओं के लिए सर्वश्रेष्ठ चारा हैं। खेजड़ी की पत्तियों और फलियों को ऊंट चारे के रूप में बड़े चाव से खाते हैं। यह चारा वर्ष में लगभग नौ माह तक उपलब्ध रहता है। अप्रैल–मई में खेजड़ी में फली (खोखे) लगती है। अच्छे परिणाम के लिए खेजड़ी की फली और पत्तियों के मिश्रण को चूरा करके पशुओं को देना चाहिए। इसकी सूखी पत्तियों का संग्रहण करके उसे सूखे चारे के रूप में भी इस्तेमाल किया जा सकता है।

बबूल (कीकड़)

बबूल की पत्तियों में प्रोटीन की मात्रा लगभग 16 प्रतिशत होती है। बबूल की पत्तियों में ताजे पानी की मात्रा 60 प्रतिशत होती है। यदि बकरी एवं भेड़ जैसे पशु बबूल की पत्तियों को दिनभर खाते रहें तो वे अपनी दैनिक जल आवश्यकता का 49 प्रतिशत से 74 प्रतिशत तक प्राप्त कर लेते हैं। चारे के रूप में कीकड़ की पत्तियों एवं फलियों का उपयोग किया जाता है। ऊंट कीकड़ की पत्तियों एवं फलियों का सेवन चाव से करते हैं। ये फलियां फरवरी, मार्च के महीने में लगती हैं।

विलायती बबूल

विलायती बबूल की फलियों का चूर्ण बनाकर उसे पशु आहार के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। काजरी के वैज्ञानिकों का दावा है कि एक तो यह आहार सस्ता पड़ता है, दूसरे इसके सेवन से पशुओं के दूध में 19 प्रतिशत वृद्धि होती है। विलायती बबूल की झाड़ी पर साल में दो बार अप्रैल–मई व अगस्त–सितम्बर में फलियां आती हैं। इसे इकट्ठा कर पशु आहार में इस्तेमाल किया जा सकता है।

बेर

सर्दी के तीन माह को छोड़ कर पूरे वर्ष बेर की झाड़ियों पर पत्तियां उपलब्ध रहती हैं। बेर की पत्तियों में प्रोटीन की अच्छी मात्रा होती है, जिस कारण यह चारे का अच्छा स्त्रोत है। बेर की पत्तियां स्वादिष्ट होती हैं, इसलिए ऊंट इसे बड़े चाव से खाते हैं।

कैर

कैर का पौधा प्रायः चार मीटर से बड़ा नहीं होता है। यह प्रायः सूखे क्षेत्रों में पाया जाता है। यह दक्षिण और मध्य एशिया, अफ्रीका और थार के मरुस्थल में मुख्य रूप से प्राकृतिक रूप में मिलता है। इस पौधे में पत्तियां नहीं होतीं, परंतु यह लगभग वर्षभर हरा रहता है। ऊंट इसकी हरी टहनियों के सूखे हुए किनारों का सेवन मुख्यतः सर्दियों में करते हैं।

सेवण घास

यह गर्म और अर्ध शुष्क क्षेत्रों के लिए सबसे अधिक उत्पादक और उपयुक्त घास है। सेवण में शुरुआती वृद्धि के दौरान आठ–10 प्रतिशत प्रोटीन होता है। यह हर 20–30 दिनों के बाद चराई होने तक और रेशेदार हो जाती है। यह गाय के लिए सबसे उपयुक्त व पौष्टिक घास है, और यह ग्रामीण क्षेत्रों में आसपास चारागाहों में मुख्य रूप से पाई जाती है। इसे पशु बड़े चाव से चरते हैं। गाय के अलावा भैंस और ऊंट भी इस घास को बहुत पसंद करते हैं।

धामन घास

धामन घास में प्रोटीन की मात्रा पांच से छह प्रतिशत होती है। यह घास दोमट से लेकर पथरीली भूमि में आसानी से उगती है। यह घास अत्यंत गर्मी और सूखे को बर्दाश्त कर लेती है तथा कम वर्षा वाले क्षेत्रों में भी चारागाह विकसित करने के लिए सर्वश्रेष्ठ घास है। यह घास पशुओं के लिए उत्तम और पौष्टिक सूखा चारा प्रदान करती है। इस घास से हरा चारा भी प्राप्त होता है, जो उच्च पाचक गुणों से भरपूर होता है। इसे सभी पशु बड़े चाव से खाते हैं और इसे साइलेज के रूप में भी संरक्षित कर रखा जा सकता है।

भुरट घास

भुरट घास में प्रोटीन की मात्रा नौ से 10 प्रतिशत तक होती है। इसलिए यह पशुओं के चारे के रूप में प्रोटीन का अच्छा स्रोत है। यह घास रेगिस्तान में मिट्टी के बहाव को रोकने में भी मदद करती है।

इस घास में बीज आने से पहले तक पशु इसे चाव से खाते हैं। बीज सूखने के बाद उनपर कांटेदार रोयें बन जाते हैं, जो पशुओं के मुंह में

चुभते हैं। इसलिए इस घास को कच्ची अवस्था में पशुओं के चराई के काम में इस्तेमाल कर सकते हैं। इसे कच्ची अवस्था में काटकर सुखाकर भी पशुओं को चारे के रूप में दे सकते हैं।

मूरट घास

इसे मुख्य रूप से पुशुओं के चारे के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। यह घास धोरों के फैलाव को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मूरट घास का चारागाह विकसित करने के लिए बरसात का मौसम सर्वोत्तम होता है। इसमें प्रोटीन की मात्रा छह से सात प्रतिशत तक होती है। मूरट घास को ऊंट सीधे चरना पसंद करते हैं। इस घास को सुखाकर सूखे चारे के लिए 'हे' के रूप में भी संरक्षित किया जा सकता है।

नेपियर घास

नेपियर में शुष्क पदार्थ की मात्रा 16 से 22 प्रतिशत, कच्चा प्रोटीन 9. 38 से 14 प्रतिशत, कैल्शियम 0.88 प्रतिशत, फास्फोरस 0.24 प्रतिशत तथा इसकी पाचकता 58 प्रतिशत है। यह घास बहुत तेजी से बढ़ती है, जिससे खेत में खरपतवार भी नहीं उग पाते हैं। हरे चारे में लगभग 13 फीसदी प्रोटीन पाया जाता है। इसकी पाचन क्षमता 60 फीसदी के करीब होती है। यह घास 25 से 30 दिनों में तैयार हो जाती है। इसे एक बार बो देने पर चार–पांच वर्ष तक आराम से हरा चारा मिलता रहता है। हरे चारे के अलावा इसे साइलेज के रूप में सरंक्षित रख सकते हैं। यह घास मक्का व ज्वार के समान ही होती है।

फोग

फोग एक झाडीनुमा पौधा होता है, जो मरू क्षेत्र में बलुई धोरों पर पाया जाता है। इस पौधे में पत्तियां नहीं होतीं, लेकिन यह लगभग आठ माह तक हरा रहता है। इसमें प्रोटीन की मात्र 18 प्रतिशत और कार्बोहाइड्रेट की मात्र 71 प्रतिशत होती है। फोग ऊंट के लिए उपयुक्त चारा है। बारिश के बाद इसके नए अंकुर फूटते हैं, और इसे पशु चाव से खाते हैं। ऊंट इसकी हरी पत्तियों, टहनियों का सेवन चाव से करता है। सर्दी के मौसम मे इसकी पत्तियां झड़ जाती है, और ऊंट झाड़ी के नीचे गिरी हुई पत्तियों को भी खा लेता है।

नीम

नीम की पत्तियां ऊंट को बहुत प्रिय हैं। नीम की पत्तियां खाने से पशु स्वस्थ भी रहता है। पशु इसकी छाल को भी बहुत चाव से खाते हैं।

नागफनी (कैक्टस)

पांच से 10 किलोग्राम नागफनी को छोटे–छोटे टुकड़ों में काटकर उसे कांटारहित बनाकर सूखे चारे के साथ प्रतिदिन पशुओं को खिलाया जा सकता है। इसमें पानी की मात्रा 90–95 प्रतिशत होती है। इसे सेवन करने वाले पशु को पानी की ज्यादा जरूरत नहीं पड़ती हैं। नागफनी खनिज में भरपूर होती है।

सिरस

सिरस की फली ऊंट के लिए प्रोटीन और ऊर्जा दोनों का बहुत अच्छा स्रोत है। सिरस की फलियां ऊंट को बहुत पसंद भी होती हैं। एक वृक्ष से अप्रैल–मई में लगभग 50 किलोग्राम तक फली प्राप्त होती है।

जाल

जाल रेगिस्तान के जहाज कहे जाने वाले ऊंट का सबसे पसंदीदा चारा है। इसकी डालियों की छंटाई कर पशुओं के चारे की व्यवस्था की जाती है। जाल के एक पेड़ से प्रति वर्ष लगभग 50 से 70 किलोग्राम चारा प्राप्त हो जाता है।

अन्य प्रमुख चारे

बुई

बुई पश्चिमी राजस्थान में पाया जाता है। वर्षा होने पर नए पौधे उग आते हैं। इसमें कुछ हानिकारक तत्व होते हैं, जिसके कारण पशु इसे कम खाते हैं। लेकिन फरवरी–मार्च में जब इसके पौधे सूखने लगते हैं, तब पशु इसे चाव से खाते हैं।

मुराली

मुराली एक झाड़ीनुमा पौधा है, जो मरू क्षेत्र में पाया जाता है। इसमें पत्तियों के नीचे कांटे होते हैं और यह प्रोटीन का एक अच्छा स्रोत है। ऊंट इसे चाव से खाते हैं।

गुडेल

गुडेल एक ऐसी वनस्पति है, जिसे फूल के लिए शुष्क व अर्ध शुष्क क्षेत्रों मे लगाया जाता है। इसमें लाल, गुलाबी फूल आते हैं। बारिश के मौसम में यह काफी बढ़ जाता है। इसकी पत्तियां भी ऊंट को बहुत पसंद हैं।

खीम्प

खीम्प मरू क्षेत्र में पाया जाने वाला एक छोटा झाड़ी नुमा पौधा है। इसका इस्तेमाल मुख्यरूप से रस्सी बनाने और छत बनाने के लिए निर्माण सामग्री के रूप में किया जाता है। बारिश के मौसम के बाद जब पौधे पर फूल खिलते हैं तब इसे ऊंट खाना पसंद करते हैं।

ऊंट के लिए फीड मिश्रण

पशुओं में प्रोटीन और ऊर्जा की कमी पूरी करने के लिए मिश्रण तैयार किया जा सकता है। विलायती बबूल की फली, सिरस की फली, खेजड़ी की पत्ती बराबर अनुपात में लवण मिश्रण और नमक के साथ देने से पशु में प्रोटीन और ऊर्जा की कमी दूर होती है। इस मिश्रण को दुधारू ऊंटनी को दो किलोग्राम प्रतिदिन, गर्भवती ऊंटनी को 1.5 किलोग्राम और वयस्क नर जिसे प्रजनन कार्य में लेना है, उसे प्रजनन (रट) के समय एक किलोग्राम प्रतिदिन देना चाहिए।

स्थानीय स्तर पर तैयार होने वाला फीड मिश्रण

खाद्य पदार्थ	प्रोटीन प्रतिशत	ऊर्जा प्रतिशत	मिश्रण में प्रतिशत	कुल प्रोटीन	कुल ऊर्जा
विलायती बबूल की फली	7	75	32	2.24	24.0
सिरस की फली	14	70	32	4.48	22.4
खेजड़ी की पत्ती	14	60	19.2	4.48	32
लवण मिश्रण	—	—	2	—	—
नमक	—	—	2	—	—
मिश्रित आहार में कुल मात्रा			100	11.2	65.6

मरू क्षेत्र मे ऊंट को वर्ष भर मिलने वाले मुख्य प्राकृतिक चारे

माह	वृक्ष	झाड़ी	बारहमासी घास	मौसमी पौधे
जनवरी	जाल, कीकड़ की पत्ती, कीकड़ की फली	कैर	सेवण, मूरट	—
फरवरी	जाल, कीकड़ की पत्ती, कीकड़ की फली	कैर	सेवण, मूरट, धामन	कांटी
मार्च	जाल, कीकड़ की पत्ती, खेजड़ी पत्ती, फली	कैर, पाला, फोग	सेवण, मूरट	—
अप्रैल	जाल, कीकड़, नीम की पत्ती खेजड़ी पत्ती, फली सिरस, विलायती बबूल की फली	पाला, फोग	सेवण, मूरट	—
मई	जाल, कीकड़, नीम की पत्ती, सिरस की फली	पाला, फोग, मुराली	सेवण, मूरट	—
जून	जाल, कीकड़, नीम की पत्ती, खेजड़ी पत्ती	पाला, फोग, मुराली	सेवण, मूरट	—
जुलाई	जाल, कीकड़, नीम की पत्ती, खेजड़ी पत्ती	पाला, फोग, मुराली	सेवण, मूरट, धामन	कांटी, चिनावरी, बेकरिया, कागा रोटी
अगस्त	खेजड़ी की पत्ती, विलायती बबूल की फली	पाला, फोग, मुराली	सेवण, मूरट, धामन	कांटी, चिनावरी, बेकरिया, कागा रोटी
सितम्बर	जाल, कीकड़, नीम की पत्ती, खेजड़ी पत्ती	पाला, फोग, मुराली	सेवण, मूरट, धामन	कांटी, चिनावरी, बेकरिया,
अक्टूबर	जाल, कीकड़, नीम की पत्ती, खेजड़ी पत्ती	पाला, फोग, मुराली	सेवण, मूरट, धामन	—
नवम्बर	जाल, कीकड़, नीम की पत्ती, विलायती बबूल की फली	पाला	सेवण, मूरट, धामन	—
दिसम्बर	जाल, कीकड़, नीम की पत्ती	पाला	सेवण, मूरट	—

पोषक तत्वों से भरपूर है ऊंटनी का दूध

ऊंट के दूध में गाय की दूध की तुलना में ज्यादा बेहतर पोषक तत्व और केमिकल कम्पाउंड पाए जाते हैं। ऊंटो को पालना पर्यावरण के लिए भी ज्यादा फायदेमंद है क्योंकि ऊंटो को खिलाने के लिए गायों और बकरियों की तरह चरने के लिए ज्यादा घास के मैदानों की जरूरत नहीं होती। कैमल मिल्क में आयरन, प्रोटीन, विटामिन ब काफी ज्यादा मात्रा में पाए जाते हैं और फैट काफी कम मात्रा में मौजूद होता है। हमारी सेहत के लिए भी यह कई तरह से फायदेमंद है। वैज्ञानिक अनुसंधानों से पता चलता है कि ऊंटनी के दूध में न केवल भरपूर पोषक तत्व होते हैं, बल्कि इसमें उच्च कोटि के एंटीऑक्सिडेंट्स भी पाए जाते हैं। इसका उपयोग पीलिया, टीबी, हृदय रोग, उच्च रक्त चाप, दूध से एलर्जी जैसे रोगों के उपचार में किया जाता है। यद्यपि ऊंटनी के दूध में वसा की मात्रा कम होती है, लेकिन प्रोटीन, लोहा, जस्ता, कॉपर जैसे खनिज और विटामिन बी व सी तथा आवश्यक वसीय अम्ल पर्याप्त मात्रा में मौजूद रहते हैं।

शरीर के विकास में सहायक

ऊंट के दूध में काफी ज्यादा मात्रा में प्रोटीन पाया जाता है जोकि गाय और बकरी के दूध में नहीं पाया जाता है। ये तो हम सब जानते हैं कि प्रोटीन बॉडी बिल्डिंग के लिए परफेक्ट होता है, इसलिए कैमल मिल्क के सेवन से शरीर का विकास तेजी से होता है और हड्डियां भी मजबूत होती हैं। कुपोषित नवजात और बच्चों के लिए ऊंट का दूध वरदान साबित हो सकता है।

रक्त के संचार को सही करता है

ऊंट के दूध में आयरन भी काफी ज्यादा मात्रा में पाया जाता है। रेड ब्लड सेल्स के लिए आयरन एक अहम कॉम्पोनेन्ट है। इसलिए आयरन की मौजूदगी के कारण ऊंट का दूध एनीमिया के मरीजों के लिए फायदेमंद साबित हो सकता है। इसके सेवन से ब्लड सर्कुलेशन भी सही होता है और शरीर के हर ऑर्गन तक आक्सीजन आराम से पहुंचता है।

दिल के लिए भी फायदेमंद

ऊंट का दूध शरीर में खराब कलेस्ट्रॉल की मात्रा को कम करता है और गुड कलेस्ट्रॉल को इम्प्रूव करता है। ब्लड प्रेशर के मरीजों के लिए भी यह काफी फायदेमंद है। इसके सेवन से हार्ट के मरीजों को हार्ट अटैक और स्ट्रोक के खतरे से बचाया जा सकता है।

स्किन प्रॉब्लम को दूर करें

बीमारियों में राहत देने के अलावा ऊंटनी का दूध के सेवन सकिन में भी निखार लाता है। ऊंटनी के दूध में अल्फा हाइड्रोक्सिल अम्ल पाया जाता है। यह त्वचा को ग्लो देता है। यही कारण है कि ऊंटनी के दूध का सेन सौंदर्य संबंधी प्रोडक्ट तैयार करने में भी किया जाता है।

संक्रामक रोगों से बचाव

ऊंटनी के दूध में विटामिन और खनिज भरपूर मात्रा में पाए जाते हैं। इसमें पाया जाने वाला एंटीबॉडी शरीर को संक्रामक रोग से बचाता है। यह गैस्ट्रिक कैंसर की घातक कोशिकाओं को रोकने में भी मदद करता है। यह शरीर में कोशिकाओं के निर्माण में मदद करता है जो संक्रामक रोगों के खिलाफ एंटीबॉडी के रूप में काम करती हैं।

सुपाच्य

ऊंटनी का दूध तुरंत पच जाता है। इसमें दुग्ध शर्करा, प्रोटीन, कैल्शियम, कार्बोहाइड्रेट, शुगर, फाइबर ,लैक्टिक अम्ल, आयरन, मैग्नीशियम, विटामिन ए, विटामिन ई, विटामिन बी 2, विटामिन सी, सोडियम, फास्फोरस, पोटेशियम, जिंक, कॉपर, मैग्नीज आदि तत्व पाए जाते हैं। ये तत्व शरीर को सुंदर और निरोगी बनाते हैं।

मस्तिष्क का विकास

ऊंटनी के दूध का नियमित सेवन करने वाले बच्चों का मसतिष्क सामान्य बच्चों की तुलना में तेजी से विकसित होता है। इतना ही नहीं उसकी सोचने–समझने की क्षमता भी सामान्य से बहुत तेज होती है। ऊंटनी का दूध बच्चों को कुपोषण से बचाता है।

हड्डियों को मजबूत करें

ऊंटनी के दूध में भरपूर मात्रा में कैल्शियम पाया जाता है। इसके सेवन से हड्डियां मजबूत होती हैं। इसमें पाया जाने वाला लेक्टोफेरिन नामक तत्व कैंसर से भी लड़ने में मददगार होता है। इसे पीने से खून से टॉक्सिन्स भी दूर होते हैं और यह लिवर को साफ करता है। पेट से जुड़ी समस्याओं में आराम

पाने के लिए भी ऊंटनी के दूध का सेवन करते हैं। ऊंटनी का दूध डायबिटीज रोगियों के लिए रामबाण है। ऊंटनी के एक लीटर दूध में 52 यूनिट इंसुलिन पाई जाती है. जो कि अन्य पशुओं के दूध में पाई जाने वाली इंसुलिन की मात्रा से काफी अधिक है। इंसुलिन शरीर में प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाती है। इसका सेवन करने से सालों का मधुमेह महीनों में ठीक हो जाता है।

ऊंटनी के दूध के अन्य उत्पाद

ऊंटनी का दूध जल्दी खराब नहीं होता है। इससे खीर, गुलाब जामुन, कुल्फी, आइसक्रीम जैसे खाद्य पदार्थ तैयार किए जा सकते हैं। ऊंटनी के दूध से बनने वाली खाने–पीने की ये चीजें बहुत स्वादिष्ट और सुपाच्य होती हैं। बाजार में इनकी अच्छी मांग होने के कारण पशुपालक को ऊंटनी के दूध के अच्छे दाम मिल जाते हैं।

साबुन व शैम्पू

ऊंटनी के दूध से साबुन भी बनता है। इसके लिए ऊंटनी का दूध, नारियल तेल और मुल्तानी मिट्टी की जरूरत होती है। इस साबुन से नहाने से चर्म रोग नहीं होता है। यह साबुन स्किन एलर्जी में भी लाभकारी होता है।

ऊंट को होने वाली प्रमुख बीमारियां

केमल पोक्स

परिचय

केमल पोक्स (चेचक, माता) बीमारी ऊंट में मसुरीका विषाणु से होती है। यह बीमारी गर्मी और बरसात के मौसम में अधिक होती है। ऊंट के छह महीने से दो साल तक के बच्चों में इसकी अधिक संभावना होती है। इस बीमारी की अवधि दो से चार सप्ताह तक होती है।

लक्षण

- ऊंट के होंठ, टांग, जननांग आदि स्थानों पर फुंसियां निकल जाती हैं, जिसे पैपुल्स कहते हैं।
- पैपुल्स बढ़ने के साथ फफोलों में बदल जाते हैं और इनमें मवाद भर जाता है। जब यह सूख जाता है तो इसे खरूंट कहते हैं।
- इस बीमारी के दौरान ऊंट को बुखार आने लगता है।
- ऊंट चारा खाना छोड़ देता है, जिससे वह बहुत कमजोर हो जाता है।

उपचार

- बीमार ऊंट को अन्य ऊंटों से अलग कर देना चाहिए।
- घाव पर केलोमाइन लोशन, जिंक ऑक्साइड तथा सूखे खरूंट पर पोविडोन आयोडीन लगाना चाहिए।

रेबीज (हिड़काव)

परिचय

रेबीज बीमारी लाहसा वायरस से होती है। यह खासतौर से पागल कुत्ते या जंगली जानवरों के काटने से होती है। यह विषाणु उनके थूक एवं लार में होता है।

लक्षण

- ऊंट खाना–पीना बंद कर देता है। मुंह से लार गिरने लगता है।
- ऊंट बार–बार काटने को दौड़ता है।
- ऊंट की आंखें चमकने लगती हैं और वह सिर अधिक ऊंचा करके रखता है।

उपचार

- संदिग्ध घाव को साबुन या एंटीसेप्टिक से अच्छे से धोना चाहिए।
- ऊंट को 14 दिनों तक एंटीरेबीज वैक्सीन दिया जाना चाहिए।
- ऊंट पागल हो जाता है तो उस स्थिति में इसका कोई उपचार नहीं है। ऊंट को मारकर जला देना ही उचित होता है।

एंथ्रेक्स (प्लीहा रोग)

परिचय

एंथ्रेक्स (गिल्टी रोग) बेसिलस एंथ्रासिस नामक जीवाणु से होता है। यह एक भयंकर संक्रामक रोग है, जो ऊंट से मनुष्य में भी फैल सकता है।

लक्षण

- अचानक दो–चार घंटों में ऊंट मर जाता है।
- ऊंट के मुंह और गूदे से गहरे लाल एवं काले रंग

का खून निकलता है।
- संक्रमित मनुष्य के शरीर पर फुंसियां निकल आती हैं।

उपचार
- एंथ्रेक्स स्पोर वैक्सीन एक मिली चमड़ी के नीचे लगाने से यह रोग नहीं होता है। यह टीका बीमारी वाले क्षेत्र में ही लगाना चाहिए।
- पेंसिलीन का टीका 10000 यूनिट प्रति किलोग्राम वजन पर दिन में दो बार मांसपेशियों में लगाना चाहिए।

तिबर्सा (सर्रा)

परिचय
तिबर्सा (सर्रा) ऊंटों में पाई जाने वाली एक जानलेवा बीमारी है। यह रोग ट्रिपेनोसोमा ईवानसाई नामक रक्त परजीवी से होता है, जो एक विशेष प्रकार की मक्खी के काटने से फैलता है।

लक्षण
- ऊंट की आंखों के ऊपरी हिस्सों एवं शरीर के निचले हिस्सों में सूजन आ जाती है।
- आंखों की झिल्ली सफेद हो जाती है और उसमें से पानी बहने लगता है।
- ऊंट मींगने (गोबर) छोटे एवं तिकोने आकार में करता है।
- ऊंट अचानक बहुत कमजोर होकर मर जाता है।

उपचार
- सुरामिन 10 ग्राम का घोल बनाकर ऊंट को देना चाहिए।
- परजीवी को नष्ट करने के लिए फिनिट दवा का छिड़काव करें।

- क्यूनेपायरेमिन सल्फेट चार मिग्रा प्रति किग्रा के अनुपात में दें।

गलघोंटू (हिमरेजिक सेप्टिसीमिया)

परिचय

यह बीमारी पास्चुरेला किस्म के जीवाणुओं से होती है। बीमार ऊंट के खून एवं अन्य अवयवों के जरिए भी यह रोग फैलता है। मानसून के महीने में यह बीमारी ज्यादा फैलती है।

लक्षण

- अचानक दर्द के साथ गले व कंधे पर सूजन आ जाती है।
- ऊंट को तेज बुखार आ जाता है।
- उसे सांस लेने में कठिनाई होती है।

उपचार

- बीमारी की प्रारंभिक अवस्था में सेल्फोनामाइड का टीका ऊंट की नस में लगवाएं।
- पशु चिकित्सक की सलाह से सल्फामेथाजीन का घोल देना चाहिए।

खुजली

परिचय

- खुजली (मेंज) ऊंटों में बड़े पैमाने पर पाया जाने वाला त्वचा रोग है। यह रोग सारकोप्टिस केमेलाई परजीवी द्वारा होता है। खुजली संक्रमित ऊंटों से स्वस्थ ऊंटों में बहुत तेजी से फैलती है।

लक्षण

- पेट, पूंछ का निचला हिस्सा और पिछली जांघ का हिस्सा सबसे पहले प्रभावित होता है।
- त्वचा के संक्रमित हिस्से में तेज खुजली होती है।

- ऊंट के बाल झड़ने लगते हैं और त्वचा सूख जाती है।
- खुजली करने के कारण ऊंट की त्वचा पर अक्सर घाव हो जाता है।

उपचार

- सल्फर (पीला जहर) को सरसों के तेल या केले के साथ मिलाकर संक्रमित त्वचा पर लगाएं।
- आर्गेनोफास्फेरस युक्त दवा का छिड़काव करें।
- आइवरमेक्टिन वैक्सीन का टीका पशु चिकित्सक की निगरानी में लगवाएं।
- विटामिन बी कॉम्प्लेक्स भी इलाज में मददगार है।

अफरा

परिचय

यह बीमारी ऊंट में बहुत कम देखने को मिलती है। इसमें ऊंट का पेट फूल जाता है।

लक्षण

- ऊंट के पेट का बायां हिस्सा फूल जाता है।
- पेट पर हाथ लगाने से हवा भरी हुई महसूस होता है।
- ऊंट को सांस लेने में तकलीफ होती है।

उपचार

- तारपीन का तेल 50 से 60 मिली व मीठा तेल 250–400 मिली मिलाकर पिलाएं।
- टिंपोल 80 ग्राम गुनगुने पानी के साथ मिलाकर पिलाएं।
- बहुत अधिक हवा होने पर ट्रोकार और केनुला बाई तरफ पेट में डालकर हवा निकाली जाती है।

ऊंट एक बहु उपयोगी राजकीय पशु

ऊंट कई लोगों के लिए दैनिक आमदनी का एक बेहतर जरिया है। इस भोले–भाले पशु की उपयोगिता न केवल कृषि एवं सिंचाई में है, बल्कि इसका उपयोग माल ढुलाई, निर्माण तथा मनोरंजन, सवारी व सफारी में भी किया जाता है। इसके अतिरिक्त राजस्थान से लगी देश की सीमा पर सुरक्षा कार्य में भी ऊंट अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ऊंट इस लिहाज से बहुउपयोगी पशुओं की श्रेणी में शुमार है।

कृषि एवं सिंचाई

राजस्थान की धरती पर जब खेती की शुरुआत हुई, तब ऊंट खेती और सिंचाई में काम आने लगे। राजस्थान में ऊंटों के जरिए फसलों की बुआई और सिंचाई लंबे समय से की जा रही है। मध्यम वर्गीय किसानों के लिए ऊंट की मदद से खेती आसान हो गई।

माल ढुलाई

राजस्थान मे ऊंट एक मालवाहक पशु भी है। जब आधुनिक मोटर–गाड़ियां विकसित नहीं हुई थीं, तब यहां माल ढुलाई का एक मात्र साधन ऊंट ही था। ऊंट गाड़ी किसी ट्रैक्टर से कम नहीं है। ऊंट की भार वहन करने की क्षमता अद्‌भुत है।

सवारी व सफारी

रेगिस्तान में आज के आधुनिक समय में भी कई स्थानों पर मोटर गाड़ियों का पहुंच पाना कठिन है।

ऐसे दुर्गम स्थानों तक ऊंट के जरिए आसानी से पंहुचा जा सकता है। रेगिस्थान में सबसे बड़ी समस्या रास्ते की है, या कहें कि यहां कोई रास्ता ही नहीं होता है। रेत मे रास्ते रात भर में बदल जाते हैं। लेकिन ऊंट की स्मृति में रास्ता दर्ज होता है। वह बगैर रास्ता भटके गंतव्य तक पहुंचा देता है।

जैविक खाद

ऊंट के मल व मूत्र का उपयोग जैविक खाद बनाने के लिए किया जाता हैं। इसमें सामान्य रूप से 0.5 प्रतिशत नाइट्रोजन, 0.2 प्रतिशत फास्फोरस और 0.5 प्रतिशत पोटाश पाया जाता है। इसके अलावा उसमें सूक्ष्मात्रिक तत्व अल्प मात्रा में विद्यमान रहते हैं।

ऊन और कॉरपेट

ऊंट के बाल बहुत उपयोगी होते हैं। पशुपालक इन्हें बाजार में ऊंचे दामों में बेचकर काफी मुनाफा कमाते हैं। ऊंट के बाल से बना कपड़ा नरम और गरम होता है। इससे उच्च श्रेणी के ऊनी कपड़े (मेल्टन इत्यादि), कंबल,

चारपाई की रस्सी, दरी या कारपेट बनाए जाते हैं।

ऊंट की खाल

ऊंट की खाल विशेष रूप से खिलौने, ड्रम कवर और कुछ प्रकार के कंटेनरों के निर्माण में उपयोगी होती है। इससे जूते भी बनते हैं। चमड़े के काम करने वालों के अनुसार, राजस्थान में चमड़े की टैनिंग की सुविधा नहीं है, लिहाज इसके लिए खाल को दक्षिण भारत पहुंचाया जाता है।

ऊंट की हड्डियां

ऊंट की हड्डियों से भी खाद बनाया जाता है, जिस तरह अन्य जानवरों की हड्डियों से बनाया जाता है। इन हड्डियों से आभूषण भी बनाए जाते हैं, और हाथी दांत के बदले ऊंट की हड्डियों का इस्तेमाल किया जाता है। इन हड्डियों का इस्तेमाल जाली और फर्नीचर निर्माण में भी होता है।

ऊंट रेगिस्तान की पारिस्थितिकी में मददगार

पूरी दुनिया में ऊंट के आलावा शायद ही कोई अन्य प्राणी है, जो रेगिस्तान की पारिस्थितिकी (इकोलॉजी) को बनाए रखने में मदद करता है। ऊंट अपनी चराई के विशेष तौर–तरीकों के जरिए रेगिस्तान की पारिस्थितिकी को बनाए रखने में अमूल्य योगदान करता है। ऊंट रेगिस्तान में दुर्गम से दुर्गम स्थान पर जाते हैं और जुगाली के माध्यम से बीजों को फैलाते चले जाते हैं। यात्रा के समय इनके गोबर में उपस्थित बीजों से भी नए पौधों का जन्म होता है।

ऊंट पालक समुदाय

राजस्थान में कई समुदाय के लोग ऊंटपालन से जुड़े हुए हैं। इसमें राईका, राजपूत, बिश्नोई और जाट समुदाय के लोग प्रमुख रूप से शामिल हैं। ऊंटपालन में राईका समाज का विशेष स्थान है। राईका समाज में आज भी ऐसे कई लोग हैं, जिनके पास लगभग 100 ऊंटों का झुंड है।

यह समुदाय ऊंट संस्कृति के साथ घनिष्ठता से जुड़ा हुआ है। राजपूत पारंपरिक रूप से अपने सैन्य अभियानों के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले ऊंटों को प्रशिक्षित करने के लिए राईका समाज पर निर्भर थे। राईकाओ ने राजपूतों से सुरक्षा के बदले में सहायता प्रदान की। जब 1947 में भारत स्वतंत्र हो गया और राजपूत महाराजाओं ने अपनी शक्ति खो दी, तो अपने ऊंट राईका समाज को दे दिए। इस समाज में महिला, बच्चे और बड़े पुरुष अपना अधिकांश समय गांवों के पास बिताते हैं। केवल पुरुष ऊंटों के साथ पलायन करते हैं।

राईका समाज में "दूध बेचना अपने बच्चों को बेचने जैसा है। यह समुदाय ऊंट संस्कृति के साथ घनिष्ठता से जुड़ा हुआ है।

ऊंट की कहानी राईका की ज़ुबानी

लोक संस्कृति में कई ऐसी कहानियां होती हैं, जिन्हें प्रमाण की आवश्यकता नहीं होती है। ये कहानियां लोक में स्वयं चलती रहती हैं और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में प्रवाहित होती रहती हैं। राईका समाज में ऐसी कई कहानियां प्रचलित हैं, जो ऊंटों के भारत में आने से जुड़ी हुई हैं। इन कहानियों में कितनी सच्चाई है नहीं पता, लेकिन इनकी रोचकता और कहानी को कहने का ढंग लोगों को आकर्षित करता है। एक ऐसी ही कहानी गोविंदसर के अमराराम ने सुनाई है, जिसका जिक्र यहां किया जा रहा है। यह कहानी 'पाबू जी' से जुड़ी हुई है, जिन्हें भारत में ऊंटों के देवता के रूप में पूजा जाता है।

पाबू जी की भतीजी केमलदे की शादी गोगा जी महाराज के साथ की गई तो उन्होंने उपहार में ऊंट देने का वादा किया था। उस समय भारत में ऊंट नहीं पाए जाते थे। दंतकथाओं के अनुसार पाबू जी लक्ष्मण के अवतार थे और उन्हें पता था कि श्रीलंका में ऊंट हैं। माना जाता है कि पाबू जी के कहने पर हरमल राईका ऊंटों के बारे में पता लगाने साधु का वेश धरकर कमंडल (तुम्बी) लेकर श्रीलंका गए थे। भारत से श्रीलंका के बीच बड़ा समुद्र था। हरमल राईका को समुद्र पार कर श्रीलंका पहुंचने का तरीका नहीं सूझ रहा था। उस वक्त बाबा बालीनाथ ने हरमल की मदद की थी। वह आगे चलते रहे और समुद्र उन्हें रास्ता देता जा रहा था। इस प्रकार हरमल राईका श्रीलंका पहुंच गए थे।

हरमल ने जिस साधु का वेश बना रखा था, वह साधु बालीनाथ जी ही थे। वह श्रीलंका पहुंचकर ऊंट ढूंढ़ रहे थे तभी उन्हें एक बूढ़ी औरत के पास ऊंट दिख गया। वह ऊंट को देख रहे थे, और बूढ़ी औरत को लगा कि शायद ये ऊंटनियां लेने आए हैं। हरमल जी बिना कुछ कहे प्रमाण के रूप में ऊंटनी का गोबर (मींगड़ा) और उसकी पूंछ के कुछ बाल लेकर पाबू जी के पास लौट आए।

पाबू जी भी लंबे समय से अपना वादा भूल गए थे कि उन्होंने केमलदे को ऊंट देने का वादा किया था। इस बीच केमलदे की सास और नंद ने ऊंट न मिलने पर उसे ताने (मेणा) देने शुरू कर दिए थे कि 'अपने ऊंतों को काबू में रखो या फिर पीहर में भेज दो'। 'ये हमारे मिट्टी के बर्तनों को तोड़ रहे हैं, हमें पानी लेने नहीं जाने देते'। इस तरह के ताने केमलदे को रोज मिलने लगे और आखिरकार एक दिन परेशान होकर केमलदे ने पाबू जी को पत्र लिखकर कहा कि आप मिट्टी के ही ऊंट बनाकर भेज दो, मुझे रोज सास और नंद ऊंट न भिजवाने के लिए ताने देती हैं।

केमलदे की यह बात पाबू जी को ताने की तरह लगी। इस ताने को सुनकर पाबू जी को अपना वादा याद आ गया। इसके बाद पाबू जी और हरमल राईका श्रीलंका गए और वहां से कई सारे ऊंट लेकर आ गए और शाम को उन ऊंटों को गोगामड़ी में छोड़ दिया।

सुबह जब केमलदे की सास और नंद पानी लेने जा रही थीं तो देखा कि सारे माटी के बर्तन टूटे हुए थे और वहां ढेर सारे ऊंट मौजूद थे। इस तरह पाबू जी को ऊंटों को भारत में लाने का श्रेय जाता है।

एक अन्य कहानी महादेव जी और पार्वती जी से जुड़ी हुई है। यह कहानी ऊंटों की उत्पत्ति के साथ ऊंट के एडर और कूबड़ की उत्पत्ति से जुड़ी हुई है। एडर ऊंट के गर्दन के नीचे के स्थान को कहते हैं, जो ऊंट के पांव की तली के जैसा ही दिखता है। कहानी कुछ इस प्रकार है।

महादेव जी जब भी पूजा करते थे, उनकी पूजा बहुत लंबी होती थी। पार्वती जी ने इस दौरान समय व्यतीत करने के लिए माटी से ऊंट की रचना की और शिव जी से निवेदन कर उसके अंदर प्राण प्रतिष्ठा

करवाई। पार्वती जी ने जिस ऊंट को माटी से बनाया था, उसके पांच पैर थे, इसलिए वह चल नहीं पता था। शिव जी ने ऊंट के पांचवें पैर को हाथ लगाकर ऊपर की ओर दबाया और इस प्रकार ऊंट का एक पैर एडर के रूप में बदल गया और ऊपर ऊंट की पीठ पर कूबड़ निकल आया। अब चार पैर हो जाने के बाद ऊंट लगातार इधर से उधर भागता रहता था, जिसे पार्वती जी नियंत्रित नहीं कर पाती थीं। शिव जी ने ऊंट को नियंत्रित करने के लिए अपने शरीर की मैल से सांबण उपजाति के राईका को उत्पन्न किया। अब उस ऊंट को राईका ही चराया करता था और पार्वती जी उसके लिए रोज खाना लेकर जाती थीं।

एक दिन पार्वती को खाना ले जाने में देरी हो गई। इस बात पर राईका थोड़ा नाराज हो गया। तब पार्वती ने राईका को समझाया कि जब भी तुझे भूख लगे, इस ऊंटनी का दूध पी लेना।

राईका एक दिन ऊंट को मशान (शमशान) में चरा रहा था, तभी उसे भूख लग गई और शमशान में पड़ी एक मटकी उठाकर ऊंटनी का दूध निकालकर वह पीने लगा। अब एक बनिये की आत्मा से राईका का झगड़ा होने लगा। राईका जिस मटकी में दूध निकालकर पी रहा था, वह उस बनिये की अंतिम यात्रा की मटकी थी। बनिया जब राईका से दूध का बर्तन छीन रहा था तभी पार्वती माता प्रकट हुईं और उन दोनों से कहा कि भूतों की तरह लड़ो मत। इसके बाद बनिया ने कहा कि 'मैं तो भूत ही हूं', तब माता ने राईका को देखते हुए कहा कि फिर दूसरा भूत यानी राईका क्यों लड़ रहा है। राईका ने मां पार्वती को इसका कारण बताया और कहा कि 'आप खाना लेकर नहीं आईं और मुझे भूख लग रही थी, इसलिए मैं दूध निकालकर पी रहा था, जिस कारण यह लड़ाई हुई।' इसी कारण राईका समुदाय के लोगों को भूत भी कहा जाता है।

ऊंटो की संस्कृति

ऊंट और खेंग

थार रेगिस्तान में ऊंट अपनी विशेष पहचान रखता है। ऊंटपालक अपने–अपने ऊंट को अलग–अलग पहचान देते हैं, और इस पहचान को खेंग, दाग या डाम के नाम से जाना जाता है।

प्रत्येक क्षेत्र के ऊंटपालकों की खेंग अलग–अलग होती है। इस खेंग में कहीं जैसलमेर राजघराने के निशान का उपयोग किया जाता है, तो कहीं चौकोर, गोल आकृतियों और चश्मा, रेखाओं आदि का इस्तेमाल किया जाता है।

खेंग देने की प्रक्रिया

खेंग या दाग देना ऊंटों को अपने टोले की पहचान देने की एक प्रक्रिया है। ऊंटपालक अपने टोले के ऊंट को पीढ़ी दर दर पीढ़ी खेंग देते आए हैं। लेकिन खेंग देने की प्रक्रिया बड़ी कष्टदायक होती है। इसमें लोहे के सरिये को गरम कर ऊंट को डाम (दागना) दिया जाता है। इससे ऊंट की त्वचा उस जगह जल जाती है और यह निशान पशु की चमड़ी पर जीवन भर के लिए अंकित हो जाता है।

खेंग देने से पूर्व ऊंट के आगे के दोनों पैरों को बांध दिया जाता है। उसके बाद ऊंटपालक उसके मुंह और नाक को कसकर दोनों हाथों से पकड़ता है, ताकि ऊंट ज्यादा हिल–डुल न पाए। एक अन्य व्यक्ति गरम सरिये को ऊंट की चमड़ी पर ठीक उसी प्रकार रखता है, जिस प्रकार की उसकी पुश्तैनी खेंग होती है। पशुप्रेमी इस प्रक्रिया को गलत मानते हैं, क्योंकि इस प्रक्रिया में ऊंटों को काफी दर्द होता है।

खेंग की पहचान से जुड़ी मुख्य बातें

ऊंट एक बड़ा जानवर है। इसलिए जिन ऊंटपालकों के पास ऊंटों का बड़ा झुंड है, उनके लिए ऊंटों का घर पर पालन–पोषण संभव नहीं हो पाता है। ऐसे में ऊंटों को खुले में चराई के लिए छोड़ दिया जाता है। जब ऊंट चराई करते हुए एक स्थान से कहीं दूर निकाल जाते हैं तो खेंग के जरिए ही ऊंटपालक अपने ऊंट की पहचान करते हैं।

खेंग की पहचान ऊंटों के क्षेत्र विशेष से जुड़ी हुई होती है। हर एक क्षेत्र विशेष के ऊंटपालक की खेंग से दूसरे क्षेत्र के ऊंटपालक की खेंग अलग होती है। यही कारण है कि क्षेत्र विशेष के ऊंटपालकों को भलीभांति पता होता है कि ऊंट पर लगी हुई खेंग किस क्षेत्र की है। उदाहरण के तौर पर राईका समाज के ऊंटपालक पश्चिमी

राजस्थान के बीकानेर, जोधपुर, जैसलमेर सभी जिलों में पाए जाते हैं, लेकिन प्रत्येक क्षेत्र के राईका ऊंटपालकों की खेंग अलग–अलग है। बीकानेर जिले के अंदर ही ग्रांधी एवं चारणवाला गांव में रहने वाले राईका ऊंटपालकों की खेंग अलग–अलग है। इसका अर्थ यह है कि यह अंतर गांव के स्तर पर भी है, जिससे ऊंटपालक अपने ऊंट की पहचान आसानी से कर लेते हैं।

भिन्न–भिन्न जाति समुदाय की खेंग भी अलग–अलग होती है। क्षेत्र विशेष के बाद जाति दूसरा प्रमुख कारक है, जो खेंग को प्रभावित करता है। खेंग की आकृति के आधार पर अन्य ऊंटपालक समझ जाते हैं कि इस ऊंट का मालिक किस जाति का है। राईका समाज के ऊंटपालकों की खेंग, राजपूत एवं बिश्नोई, जाट आदि समुदायों द्वारा दी जाने वाली खेंग से बिल्कुल अलग होती है।

यदि किसी समुदाय विशेष के ऊंटपालक से कोई व्यक्ति ऊंट खरीदता है तो उस ऊंट के साथ ऊंटपालक की खेंग भी जाती है और जिस क्षेत्र विशेष में वह रहता है, उसके साथ उस ऊंटपालक की खेंग का भी विस्तार होता रहता है।

पहले ऊंटपालक ऊंटों की चराई के लिए बहुत दूर दूर तक चले जाते थे। आजादी से पहले जब इस रेगिस्तान में ऊंटों के चारे की कमी पड़ती थी तो कई ऊंटपालक पाकिस्तान के सिंध तक ऊंटों के चारे के लिए और स्वयं के लिए अनाज लेने चले जाते थे। पहले यहां ऊंटपालन आजीविका का प्रमुख साधन था, और वे अपने टोलों के साथ रहते थे। लेकिन इस क्षेत्र में इंदिरा गांधी नहर आने के बाद यहां के ऊंटपालकों का रुझान खेती की तरफ भी बढ़ा। इस कारण ऊंटपालकों में टोलों के साथ घूमने का चलन कम हो गया। ऊंटपालक अपने खेतों में ढानियां बनाकर रहने लगे। खेती के व्यवसाय से जुड़ने के बाद ऊंटपालक स्थिर होने लगे, और उनके रहने के स्थान अलग–अलग हो गए। लेकिन उनकी खेंग अभी भी आपस में मिलती है। यही कारण है कि बीकानेर में सुदूर सीमा के पास स्थित रणजीतपुरा गांव में पाई जाने वाली खेंग, जोधपुर जिले के सुवाप गांव के ऊंटपालकों की खेंग से काफी मिलती है।

नीचे तालिका में बीकानेर एवं जोधपुर जिले के गांवों से कुछ ऊंटपालकों की खेंग की आकृतियों को इकट्ठा किया गया है।

क्र०सं०	खेंग	स्थान	खेंग का नाम
1	पैर पर कान के पास	बेरासर, नोखा, बीकानेर	राईकों की खेंग
2	पैर पर कान पर नाक पर	आऊं, जोधपुर	राईकों की खेंग
3	पैर पर कान के पास नाक पर	सुवाप, जोधपुर	राईकों की खेंग
4	पैर पर कान के पास	बीकमकौर, जोधपुर	राईकों की खेंग
5	पैर पर कान के पास नाक पर	बड़ेरन, लूणकरनसर, बीकानेर	राईकों की खेंग
6	पैर पर कान के पास	देणोक, जोधपुर	राईकों की खेंग
7	दाएं पैर पर बाएं पैर पर	बज्जु, गिर्राजसर, गड़ियाला, ग्रांधी, मोटासर, पैथड़ों की ढानी	भंवरलाल बिश्नोई राईकों की खेंग

क्र०सं०	खेंग	स्थान	खेंग का नाम
8	बाएं पैर पर बाएं कान के पास	रणजीतपुरा, बीकानेर	हड़मान झांवर हालिया खेंग
9	दाएं पैर पर बाएं कान के पास	तांवरवाला, बीकानेर	पाबुराम जी राईकों की खेंग (जैसलमेर का दाग)
10	बाएं पैर पर	चारणवाला	महादान जी राईकों की खेंग (भाटियों का दाग)
11	दाएं पैर पर	रणजीतपुरा, बीकानेर	नथूराम जी मुंड बरसिंह भाटी की खेंग
12	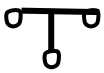	गोविंदसर	कुमावतों की खेंग
13		ग्रांधी	भंवर सिंह भीड़मल भाटी की खेंग
14		ग्रांधी	खालथ राठौड़ की खेंग

वर्तमान में ऊंटपालक चुनौतियां और समाधान

सड़कों पर बढ़ती गाड़ियों की रफ्तार और घटते चारागाह के बीच रेगिस्तान का जहाज अपना वजूद बचाने के लिए संघर्ष कर रहा है। ऐसे में यदि ऊंटनी के दूध और अन्य उत्पादों को बढ़ावा दिया जाए तो देश में ऊंटों की संख्या में लगातार हो रही गिरावट पर रोक लगाई जा सकती है और ऊंट पालन को एक आकर्षक उद्यम बनाया जा सकता। इसके लिए बस लोगों को जागरूक करना है कि ऊंट पालन के क्या–क्या फायदे हो सकते हैं।

यह सच है कि बदलते समय के साथ ऊंट की उपयोगिता घटी है। परिस्थितिवश कई लोगों ने ऊंटपालन छोड़ दिया है। जो लोग अभी ऊंटपालन कर भी रहे हैं, आमदनी न होने के कारण उनका इस दुर्लभ जानवर के प्रति मोह भंग हो रहा है। लेकिन एक सच्चाई यह भी है कि भारत के सीमावर्ती रेतीले इलाकों में बहुत सारे गांव आज भी ऐसे हैं, जहां रेत की अधिकता होने के कारण पक्की सड़क नहीं बन सकी है। इन दुरूह और दुर्गम क्षेत्रों के निवासियों के लिए प्राचीनकाल से लेकर आज तक ऊंट ही आवागमन, माल ढुलाई, खेती और आजीविका का सबसे सुलभ और सर्वोत्तम साधन बना हुआ है।

ऐसे में द कैमल पार्टनरशिप इन ऊंटपालकों के लिए संजीवनी साबित हो सकती है। संस्था की सहायता से विलुप्ति के कगार पर आ पहुंचे ऊंट और ऊंटपालकों को नई दिशा मिल सकती है।

इसके लिए सबसे पहले हमें यह पता करना होगा कि आखिर ऊंटपालन के रास्ते में चुनौतियां क्या हैं, और उन चुनौतियों से कैसे उबरा जा सकता है। ऊंट की उपयोगिता सिर्फ भारत में ही नहीं, दुनिया के सभी रेगिस्तानी इलाकों में है। यहां तक कि अरब देशों में ऊंट को अताउल्लाह (अल्लाह का दिया तोहफा) कहा जाता है। वहां ऊंट की सबसे ज्यादा जरूरत समझी जाती है।

रेगिस्तान का डूबता जहाज

20वीं पशु गणना के आंकड़ों से पता चलता है कि ऊंटों की संख्या में 34.69 प्रतिशत की गिरावट आई है। यानी जहां पहले राजस्थान में ऊंटों की संख्या 3. 26 लाख थी, वहीं अब यह संख्या घटकर 2.13 लाख रह गई है।

ऊंटों की संख्या में गिरावट क्यों ?

जानकारों के मुताबिक, ऊंटों की संख्या में गिरावट के पीछे कई कारण हैं। कुछ प्रमुख कारण इस प्रकार हैं।

- चारागाहों की कमी
- ऊंटों में प्रजनन की कमी व
- युवाओं में ऊंटपालन के प्रति घटता रुझान
- बीमार ऊंट
- चारे की कमी, तस्करी और ऊंटों का अवैध वध।

एक स्वस्थ्य ऊंट ही ऊंटपालक की समृद्धि होती है। इसलिए इस पुस्तिका में ऊंटों को होने वाली प्रमुख बीमारियों के सामान्य परिचय, लक्षण और उनके उपचार के बारे में जानकारी दी गई है, ताकि ऊंटपालक इसके बारे में जागरूक हो सकें।

समाधान

ऊंटों की घटती संख्या या ऊंटपालन के प्रति लोगों का घटता रुझान सीधे तौर पर उसकी उपयोगिता से जुड़ा हुआ है। आधुनिक समय में ऊंट लोगों के लिए उतना उपयोगी नहीं रहा, जितना पहले था। यह भी कह सकते हैं कि अब लोगों की जरूरतें ऊंटपालन से आगे निकल चुकी हैं। अब ऐसे में इस पशु को बचाना है तो इसकी उपयोगिता को आकर्षक बनाना होगा, उसे बाजार से जोड़ना होगा। साथ ही ऊंटपालन को सस्ता और आसान बनाना होगा।

ऊंट से प्राप्त होने वाले उत्पादों को अच्छा बाजार मुहैया कराकर ऊंटपालन की तरफ लोगों को आकर्षित किया जा सकता है। इसके अलावा ऊंटों के लिए प्राकृतिक पर्यावास को भी संरक्षित करना होगा, ताकि ऊंट का पालन–पोषण प्राकृतिक चारों से हो जाए। जब ऊंटपालन में लागत घटेगी और आमदनी बढेगी, तब लोग इस तरफ अपने आप आकर्शित होंगे और इस तरह इस पशु का तो भला होगा ही, समाज और देश का भी भला होगा।

परियोजना में शामिल संस्थाएं

उरमूल ट्रस्ट

राजस्थान के रेगिस्तानी इलाके में जीवन आसान नहीं है। पानी ही नहीं जीवन से जुड़ी लगभग हर चीज के लिए यहां संघर्ष करना पड़ता है। लोगों के इसी संघर्ष को कुछ हद तक आसान बना रहा है उरमूल यानी उत्तरी राजस्थान मिल्क यूनियन लिमिटेड। वर्ष 1972 में दूध उत्पादक पशुपालकों की सहकारी समिति से शुरुआत करने वाला यह संगठन 1984 में एक ट्रस्ट के रूप में बदल गया। आज यह संस्था राजस्थान के उत्तर–पश्चिम हिस्से के रेगिस्तानी जिलों की 500 पंचायतों में 30 हजार से ज्यादा किसानों, पशुपालकों, बुनकरों और सामान्य परिवारों की जिंदगी को आसान बनाने की कोशिश में जुटी हुई है।

संस्था की शुरुआत राजस्थान के बीकानेर जिले से हुई थी। अभी भी इसका मुख्य केंद्र बीकानेर जिला ही है। इसके अलावा लूणकरणसर, बज्जू, छत्तरगढ़ सहित चुरू के सरदारशहर, जोधपुर के फलौदी और जैसलमेर व नागौर के कुछ हिस्सों में यह ट्रस्ट अपनी विभिन्न सहयोगी संस्थाओं उरमूल सेतु, उरमूल सीमांत, बुनकर विकास समिति, उरमूल खेजड़ी, वसुंधर, उरमूल ज्योति और अभिव्यक्ति के माध्यम से स्थानीय लोगों के स्वास्थ्य, पशुओं की देखभाल, पशुओं की उन्नत नस्ल तैयार करने, बालिका शिक्षा, बाल विवाह प्रथा उन्मूलन जैसी कई गतिविधियां संचालित कर रहा है।

सेंटर फॉर पास्टोरालिज्म (सहजीवन)

सहजीवन बीते 25 सालों से पारंपरिक प्राकृतिक ज्ञान प्रणालियों को फिर से जीवित करने, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए उपयुक्त प्रौद्योगिकी और वैज्ञानिक तरीकों को अपनाकर समुदाय के लिए बेहतर रोजगार तैयार करने में जुटा हुआ है।

संस्था का मुख्य केंद्र कच्छ में स्थित हैं, और यह संस्था स्थानीय शासन संस्थानों, समुदायों और इस क्षेत्र की जैव विविधता को बचाने की दिशा में सक्रिय है। यह संस्था स्थानीय भू–वैज्ञानिक समाधानों पर आधारित परंपरागत जल संरक्षण प्रणालियों को पुनर्जीवित करने, गांव के जीवन को दोबारा पटरी पर लाने, स्वदेशी पशुधन प्रजनन प्रथाओं को बढ़ावा देने और वर्षा आधारित कृषि के माध्यम से समाज को मजबूत करने के लिए भी काम कर रही है।

डेजर्ट रिसोर्स सेंटर

डेजर्ट रिसोर्स सेंटर रेगिस्तान की जमीन, जीवन और जीवनयापन में सुधार करने के लिए समर्पित है। संस्था के इन सुधार कार्यों का आधार ज्ञान (नॉलेज), संसाधन (रिसोर्स), साझेदारी (पार्टनरशिप) और प्रौद्योगिकी (टेक्नोलॉजी) हैं। इन्हीं उपागमों के माध्यम से डेजर्ट रिसोर्स सेंटर थार रेगिस्तान के जीवन और पर्यावरण में एक सकारात्मक परिवर्तन लाना चाहता है, ताकि दुनिया में उपलब्ध ज्ञान, संसाधन, अनुभव और प्रौद्योगिकी का उपयोग कर स्थानीय समस्याओं का समाधान किया जा सके।

परियोजना का स्थान

वर्तमान में यह परियोजना बज्जू, चिमाणा और पोकरण क्लस्टर में ऊंटपालकों के साथ मिलकर चलाई जा रही है।

पाठक वर्ग

यह पुस्तिका राजस्थान के ऊंटपालकों को ध्यान में रखकर लिखी जा रही है। इसलिए इसके मुख्य पाठक वर्ग ऊंटपालक ही हैं। इसके अतिरिक्त यह डेजर्ट रिसोर्स सेंटर के ज्ञान उपागम से जुड़ी होने के कारण ऊंट पर अनुसंधान कार्य करने वालों एवं संस्था और इसमें सामान्य रुचि रखने वालों के लिए भी उपयोगी हो सकती है।

सामग्री स्रोत

इस पुस्तिका को लिखने के लिए हमने प्राथमिक और द्वितीयक दोनों स्तर पर जानकारी जुटाने का प्रयास किया है। थार रेगिस्तान के ऊंटपालकों के वास्तविक अनुभव से लेकर राष्ट्रीय उष्ट्र अनुसंधान केंद्र के माध्यम से प्राप्त जानकारी और द कैमल पार्टनरशिप परियोजना के माध्यम से किए गए विभिन्न कार्य एवं एकत्रित जानकारियां इस किताब की विषय–सामग्री का महत्वपूर्ण स्रोत हैं।

Notes

Notes

Notes

Notes

Notes

THE CAMEL PARTNERSHIP

communities | enterprises | policies

उरमूल ट्रस्ट, उरमूल भवन,
रोडवेज़ बस स्टैण्ड के पास बीकानेर – 334001 राजस्थान
Tel: + 91 151 252 3093; e-mail: mail@urmul.org;
www.facebook.com/Urmul/